[2018] 4 उम. नि. प. 125

प्रमोद लक्ष्मण गुडाढे

बनाम

भारत का निर्वाचन आयोग और अन्य

9 मई, 2018

मुख्य न्यायमूर्ति दीपक मिश्रा, न्यायमूर्ति ए. एम. खानविलकर और न्यायमूर्ति डी. वाई. चन्द्रचूड़

लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 (1951 का 43) – धारा 151क – लोक सभा उप-निर्वाचन – रिक्त स्थान को भरने की समय-सीमा – जब लोक सभा की किसी रिक्ति से संबंधित सदस्य की पदावधि का शेष भाग एक वर्ष से कम न हो और अभ्यर्थी के विरुद्ध कोई निर्वाचन विवाद लंबित न हो तथा निर्वाचन आयोग ने केन्द्रीय सरकार से परामर्श करके यह प्रमाणित न किया हो कि उक्त अवधि के भीतर ऐसा उप-निर्वाचन कराना कठिन है, तो उप-निर्वाचन अवश्य कराया जाना चाहिए ।

प्रस्तुत विशेष इजाजत याचिका में याची ने, जो कि भंडारा-गौंडिया संसदीय निर्वाचन-क्षेत्र का एक मतदाता है, एक विदग्ध रीति में यह प्रतिपादित करके एक चुनौती उत्पन्न की है कि उच्च न्यायालय ने अधिनियम की धारा 151क का गलततौर पर निर्वचन किया है । निर्वाचित प्रतिनिधि ने, जोकि 4 जून, 2014 को कराए गए लोक सभा के साधारण निर्वाचन में ऊपर उल्लिखित निर्वाचन-क्षेत्र से निर्वाचित हुआ था, लोक सभा प्रक्रिया और कारबार संचालन नियमों के नियम 240(1क) के साथ पठित संविधान के अनुच्छेद 101(3) के अधीन तारीख 8 दिसम्बर, 2017 को संसद् सदस्य के रूप में अपना त्यागपत्र दे दिया था और उसे 14 दिसम्बर, 2017 को स्वीकार कर लिया गया था । चूंकि स्थान रिक्त हो गया, इसलिए याची, जो कि एक लोक हित भाव युक्त व्यक्ति है, 2018 की लोक हित याचिका सं. 31 में संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय में अन्य बातों के साथ-साथ यह दलील देते हुए समावेदन किया कि यदि निर्वाचन मई, 2018 मास में हुआ तो नए पदधारी को जो प्रभावी अवधि मिलेगी वह केवल मार्च, 2019 तक होगी, अर्थात् जो कि एक वर्ष से कम होगी और इसलिए वह संपूर्ण जोश से कृत्य करने और जनता को सेवा प्रदान करने की स्थिति में नहीं होगा और इसके अलावा, निर्वाचन कराने में पर्याप्त व्यय भी होगा । उसने निर्वाचन सुधारों से संबंधित भारत

के विधि आयोग के प्रतिवेदन सं. 255 का सहारा लिया । इस आधार को सिद्ध करने के लिए अधिनियम की धारा 151 का अवलंब लिया गया था कि निर्वाचन कराना उक्त उपबंध के अधीन अनुज्ञेय नहीं था । उच्च न्यायालय ने धारा 151क में प्रयुक्त भाषा की संवीक्षा करते हुए यह राय व्यक्त की कि याची द्वारा दिए गए तर्क में कोई सार नहीं है और परिणामस्वरूप उसने रिट याचिका खारिज कर दी । इस निर्णय के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में विशेष इजाजत याचिका फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा विशेष इजाजत याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – वर्तमान मामले में, कोई निर्वाचन अर्जी लंबित नहीं थी । निर्वाचित अभ्यर्थी ने तारीख 8 दिसम्बर, 2017 को अपना त्यागपत्र दे दिया था और उसे लोक सभा के अध्यक्ष द्वारा तारीख 14 दिसम्बर, 2017 को स्वीकार कर लिया गया था । लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 151क की आज्ञा यह है कि रिक्ति उद्भूत होने की तारीख से छह मास की अवधि के भीतर निर्वाचन कराया जाए । जैसा कि तथ्यात्मक स्थिति से प्रदर्शित होता है, रिक्ति तब उद्भूत हुई जब लोक सभा के अध्यक्ष द्वारा तारीख 14 दिसम्बर, 2017 को त्यागपत्र स्वीकार कर लिया गया था । यह निर्विवाद है कि लोक सभा के लिए अगला साधारण निर्वाचन जून, 2019 में होना है । अतः, शेष पदावधि एक वर्ष से कम नहीं है । यह बात धारा 151क के परन्तुक के खंड (ख) द्वारा शासित होगी कि निर्वाचन कराया जाए अथवा नहीं और हमारा उससे कोई सरोकार नहीं है । इस आधार में बिल्कुल भी कोई सार नहीं है कि जून, 2019 में निर्वाचन कराए जाने से पूर्व आचार संहिता लागू हो जाएगी क्योंकि अधिनियम में ऐसा अनुध्यात नहीं है । निर्वाचन अर्जी के लंबित रहने के अधीन रहते हुए, मात्र अवधि ही शासित करने वाला कारक होना चाहिए क्योंकि वह सर्वोपरि खंड द्वारा नियंत्रित नहीं है । ऐसा निर्वचन लोकतंत्र के पवित्र सिद्धांत के अनुसार है और संसद् का आशय यह है कि किसी निर्वाचन-क्षेत्र को प्रतिनिधित्व के बिना न छोड़ा जाए । राजकोष पर पड़ने वाले भार के संबंध में अभिव्यक्त की गई चिन्ता को आधार नहीं माना जा सकता है । ऐसा इसलिए है क्योंकि प्रतिनिधित्व लोकतंत्र को निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा ही अपने आप को कायम रखना है । हम यह जोड़ने की जल्दबाजी कर सकते हैं कि मामला तब भिन्न होगा जब अभ्यर्थी के विरुद्ध कोई ऐसा निर्वाचन विवाद लंबित हो, जो कि अधिनियम की धारा 84 या धारा 98(ग) या धारा 101(ख) की परिधि के भीतर आता है । चूंकि ऐसी स्थिति नहीं है इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा अभिव्यक्त मत पूर्णतः अभेद्य है । (पैरा 16)

लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 के उपबंधों को इस प्रकार आरोपित किया गया है जिससे कि उसके अंतर्गत निर्वाचन के अनेक पहलू आ जाएं, जिसके अंतर्गत निर्वाचन कराने की रीति, पद्धति और निर्वाचन को अपास्त करने के आधार भी आते हैं । अधिनियम में सक्षम प्राधिकारी को इस बात का ध्यान रखने के लिए आबद्ध किया गया है कि कोई भी निर्वाचन-क्षेत्र एक नियत अवधि के परे प्रतिनिधित्व के बिना न रहे । ऐसा इस कारण है कि निर्वाचित प्रतिनिधि से यह प्रत्याशा की जाती है कि वह समग्र रूप से निर्वाचकगण की चिन्ताओं को प्रतिध्वनित करे । मतदाताओं को उक्त अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता यदि कानून में ऐसा संरक्षण प्रदान किया गया है । यद्यपि निर्वाचन लड़ने का अधिकार कोई मूल अधिकार नहीं है तथापि, किसी कानूनी उपबंध के संबंध में ऐसा निर्वचन नहीं किया जाना चाहिए, जिससे प्रतिनिधित्व करने का अनिवार्य प्रयोजन ही विफल हो जाएगा । (पैरा 2)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2011] (2011) 1 एस. सी. सी. 370 :
भारत का निर्वाचन आयोग बनाम **तेलंगाना राष्ट्र समिति और एक अन्य** ; 14,15

[2002] ए. आई. आर. 2002 कर्नाटक 232 :
श्री थॉमस मेट्स गुडिनहो बनाम **भारत का निर्वाचन आयोग, नई दिल्ली और अन्य** ; 15

[1967] ए. आई. आर. 1967 एस. सी. 1211 :
डी. संजीवय्या बनाम **निर्वाचन अधिकरण, आन्ध्र प्रदेश और अन्य** । 13

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2018 की विशेष इजाजत याचिका (सिविल) सं. 9968.

2018 की लोक हित याचिका सं. 31 में मुम्बई उच्च न्यायालय की नागपुर न्यायपीठ के तारीख 11 अप्रैल, 2018 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध विशेष इजाजत याचिका ।

याची की ओर से सर्वश्री विकास सिंह, ज्येष्ठ अधिवक्ता,

(सुश्री) अनंघा एस. देसाई, महमूद उमर फारूकी और सत्यजीत ए. देसाई

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायमूर्ति दीपक मिश्रा ने दिया ।

मु. न्या. मिश्रा – किसी पवित्र लोकतांत्रिक निकाय की राज्यव्यवस्था में, प्रारंभिक अपेक्षा निष्पक्ष और समय पर निर्वाचन कराना होता है । किसी प्रकार की कट्टर विचारधारा का परित्याग करते हुए निर्वाचन की शुद्धता, लोकतंत्र की मूलभूत संकल्पना को कायम रखने के लिए एक अभिन्न तत्व है जो कि हमारे संविधान की मूलभूत विशेषता है । यदि "लोकतंत्र की विचारधारा" दूषित हो जाती है तो विधिसम्मत शासन की आधारशिला का क्षय हो जाता है । जब कोई व्यक्ति, अपनी हैसियत से वंचित, अपना मत डालने के लिए किसी निर्वाचन बूथ पर जाता है तब वह स्वयं को सशक्त और सम्मानित महसूस करता है और उसका आत्म-सम्मान प्रबलित हो जाता है क्योंकि उसकी अंतरात्मा उसे यह बताती है कि वह अपने मताधिकार का प्रयोग करके एक ऐसे प्रतिनिधि का चुनाव कर रहा है जो उसके निर्वाचन-क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करेगा । सशक्त महसूस करने की यही अनुभूति है । उसकी ऐसी भागीदारी उसे उसके राजनैतिक अधिकार और इस सामूहिक भावना का एहसास कराती है कि संविधान के अनुसार शासन होगा जिससे कि व्यक्तियों के अधिकारों को संरक्षित किया जाए और सामूहिक आकांक्षाओं को ध्यान में रखा जाए । लोकतंत्र के अनेक समर्थकों द्वारा यह कहा गया है कि सदैव ऐसा वातावरण बना रहना चाहिए जहां कि लोकतंत्र के विचार सुरक्षित रह सकें ।

2. भारत के संविधान में किसी व्यक्ति के अधिकारों को ध्यान में रखते हुए, राजनैतिक अधिकारों के अनेक पहलुओं पर बल दिया गया है । अतः, लोकतंत्र में, निर्वाचन कराना महत्वपूर्ण हो जाता है और सांविधानिक और कानूनी उपबंधों द्वारा इसे ध्यान में रखा जाता है । निर्वाचन लड़ने के लिए पात्रता संबंधी मानदंडों का उपबंध किया गया है और कभी-कभी स्थानीय स्वायत्त शासन में होने वाले निर्वाचनों की बाबत और अधिक निर्बंधन लगा दिए जाते हैं । निर्वाचन-क्षेत्रों के परिसीमन और आरक्षण की परिकल्पना की गई है और उन्हें लाभप्रद बनाया गया है जिससे कि संविधान के समावेशी स्वरूप को सुदृढ़ किया जा सके । लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 (जिसे संक्षेप में 'अधिनियम' कहा गया है) के उपबंधों को इस प्रकार आरोपित किया गया है जिससे कि उसके अंतर्गत निर्वाचन के अनेक पहलू आ जाएं, जिसके अंतर्गत निर्वाचन कराने की रीति, पद्धति

और निर्वाचन को अपास्त करने के आधार भी आते हैं । अधिनियम में सक्षम प्राधिकारी को इस बात का ध्यान रखने के लिए आबद्ध किया गया है कि कोई भी निर्वाचन-क्षेत्र एक नियत अवधि के परे प्रतिनिधित्व के बिना न रहे । ऐसा इस कारण है कि निर्वाचित प्रतिनिधि से यह प्रत्याशा की जाती है कि वह समग्र रूप से निर्वाचकगण की चिन्ताओं को प्रतिध्वनित करे । मतदाताओं को उक्त अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता यदि कानून में ऐसा संरक्षण प्रदान किया गया है । यद्यपि निर्वाचन लड़ने का अधिकार कोई मूल अधिकार नहीं है तथापि, किसी कानूनी उपबंध के संबंध में ऐसा निर्वचन नहीं किया जाना चाहिए जिससे प्रतिनिधित्व करने का अनिवार्य प्रयोजन ही विफल हो जाएगा ।

3. प्रारंभिक टिप्पण एक अधिपत्र बन गया है क्योंकि इस विशेष इजाजत याचिका में याची ने, जो कि भंडारा-गौंडिया संसदीय निर्वाचन-क्षेत्र का एक मतदाता है, एक विदग्ध रीति में यह प्रतिपादित करके एक चुनौती उत्पन्न की है कि उच्च न्यायालय ने अधिनियम की धारा 151क का गलततौर पर निर्वचन किया है ।

4. निर्वाचित प्रतिनिधि ने, जो कि 4 जून, 2014 को कराए गए लोक सभा के साधारण निर्वाचन में ऊपर उल्लिखित निर्वाचन-क्षेत्र से निर्वाचित हुआ था, लोक सभा प्रक्रिया और कारबार संचालन नियमों के नियम 240(1क) के साथ पठित संविधान के अनुच्छेद 101(3) के अधीन तारीख 8 दिसम्बर, 2017 को संसद् सदस्य के रूप में अपना त्यागपत्र दे दिया था और उसे 14 दिसम्बर, 2017 को स्वीकार कर लिया गया था ।

5. चूंकि स्थान रिक्त हो गया, इसलिए याची, जो कि एक लोक हित भाव युक्त व्यक्ति है, 2018 की लोक हित याचिका सं. 31 में संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन मुम्बई उच्च न्यायालय की नागपुर न्यायपीठ में अन्य बातों के साथ-साथ यह दलील देते हुए समावेदन किया कि यदि निर्वाचन मई, 2018 मास में हुआ तो नए पदधारी को जो प्रभावी अवधि मिलेगी वह केवल मार्च, 2019 तक होगी, अर्थात् जो कि एक वर्ष से कम होगी और इसलिए वह संपूर्ण जोश से कृत्य करने और जनता को सेवा प्रदान करने की स्थिति में नहीं होगा और इसके अलावा, निर्वाचन कराने में पर्याप्त व्यय भी होगा । उसने निर्वाचन सुधारों से संबंधित भारत के विधि आयोग के प्रतिवेदन सं. 255 का सहारा लिया । इस आधार को सिद्ध करने के लिए अधिनियम की धारा 151 का अवलंब लिया गया था कि निर्वाचन कराना उक्त उपबंध के अधीन अनुज्ञेय नहीं था ।

6. उच्च न्यायालय ने धारा 151क में प्रयुक्त भाषा की संवीक्षा करते हुए यह राय व्यक्त की कि याची द्वारा दिए गए तर्क में कोई सार नहीं है और परिणामस्वरूप उसने रिट याचिका खारिज कर दी ।

7. हमने याची की ओर से विद्वान् काउन्सेल सुश्री अनंघा एस. देसाई के साथ-साथ विद्वान् ज्येष्ठ काउन्सेल श्री विकास सिंह को भी सुना ।

8. निर्वाचन कराने और त्यागपत्र देने से संबंधित तारीखों के संबंध में कोई विवाद नहीं किया गया है । इसके अलावा, यह कोई ऐसा मामला नहीं है जिसमें निर्वाचित अभ्यर्थी के विरुद्ध उच्च न्यायालय के समक्ष कोई निर्वाचन अर्जी लंबित हो । यह भी विवादग्रस्त नहीं है कि लोक सभा के लिए साधारण निर्वाचन जून, 2019 में कराए जाने हैं ।

9. उक्त अविवादित तथ्यात्मक स्थिति होने के कारण, हमें केवल कानूनी उपबंधों और उप-निर्वाचन कराने के न्यायौचित्य का विश्लेषण करना है । अधिनियम का भाग 9 उप-निर्वाचनों के बारे में है । धारा 147 का संबंध राज्य सभा में आकस्मिक रिक्तियों से है । धारा 149 में लोक सभा में होने वाली आकस्मिक रिक्तियों का उल्लेख है । धारा 150 में राज्य विधान सभाओं में आकस्मिक रिक्तियों के बारे में कथन है और धारा 151 राज्य विधान परिषदों में होने वाली आकस्मिक रिक्तियों के संबंध में है । चूंकि धारा 151क, जो कि लोक प्रतिनिधित्व (संशोधन) अधिनियम, 1991 (1996 का 21) द्वारा तारीख 1 अगस्त, 1996 से अंतःस्थापित की गई थी, प्रस्तुत प्रयोजन के लिए सुसंगत है, इसलिए उसे नीचे उद्धृत किया जाता है :–

> "**151क. धारा 147, धारा 149, धारा 150 और धारा 151 में निर्दिष्ट रिक्तियों को भरने के लिए समय की परिसीमा** – धारा 147, धारा 149, धारा 150 और धारा 151 में किसी बात के होते हुए भी, उक्त धाराओं में से किसी में निर्दिष्ट किसी रिक्ति को भरने के लिए उप-निर्वाचन, रिक्ति होने की तारीख से छह मास की अवधि के भीतर कराया जाएगा :
>
> परन्तु इस धारा की कोई बात उस दशा में लागू नहीं होगी, जिसमें –
>
> (क) किसी रिक्ति से संबंधित सदस्य की पदावधि का शेष भाग एक वर्ष से कम है ; या

(ख) निर्वाचन आयोग, केन्द्रीय सरकार से परामर्श करके यह प्रमाणित करता है कि उक्त अवधि के भीतर ऐसा उप-निर्वाचन कराना कठिन है ।"

10. उपर्युक्त उपबंध सर्वोपरि खंड से प्रारंभ होता है और उसमें स्पष्ट रूप से यह कहा गया है कि धारा 147, धारा 149, धारा 150 और धारा 151 में किसी बात के होते हुए भी, उक्त धाराओं में से किसी में निर्दिष्ट किसी रिक्ति को भरने के लिए उप-निर्वाचन, रिक्ति होने की तारीख से छह मास की अवधि के भीतर कराया जाएगा । निर्वाचन कराना एक शर्त द्वारा नियंत्रित है, अर्थात्, उस रिक्ति के संबंध में किसी सदस्य की शेष पदावधि एक वर्ष से कम नहीं है । इसके अलावा उसमें यह अभिधारणा की गई है कि यदि निर्वाचन आयोग, केन्द्रीय सरकार से परामर्श करके यह प्रमाणित करता है कि उक्त अवधि के भीतर उप-निर्वाचन कराना कठिन है तो धारा 151क में अंतर्विष्ट उपबंध का प्रमुख भाग लागू नहीं होगा । प्रस्तुत मामले में, हमारा संबंध दूसरी अभिधारणा से नहीं है क्योंकि जो कुछ विचारार्थ उद्भूत हुआ है उसका संबंध केवल अवधि की संकल्पना से है ।

11. याची की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउन्सेल श्री विकास सिंह ने यह दलील दी है कि धारा 151क में अंतर्विष्ट प्रतिषेध प्रत्यक्षतः लागू होता है और इसलिए उच्च न्यायालय के लिए निर्वाचन आयोग को निर्वाचन न कराने के लिए अवरुद्ध करना बेहतर होता । उसके द्वारा आगे यह प्रतिपादित किया गया है कि किसी निर्वाचन को कराने में राजकोष से खर्च की जाने वाली रकम अंततः करदाताओं पर भार डालती है और इसके अलावा, निर्वाचित अभ्यर्थी की केवल कुछ औपचारिक भूमिका होगी क्योंकि वह निर्वाचकगण के सदस्यों के लिए कुछ करने की स्थिति में नहीं होगा और इसलिए, निर्वाचन का संचालन अनुज्ञात नहीं किया जाना चाहिए ।

12. प्रारंभ में, हमें एक ओर अधिनियम की धारा 147, धारा 149, धारा 150 और धारा 151 तथा दूसरी ओर धारा 151 के बीच विभेद करना चाहिए । इन उपबंधों का निर्वचन करते समय यह ध्यान में रखना होगा कि यद्यपि किसी व्यक्ति का निर्वाचन करने का अधिकार लोकतंत्र के लिए मूलभूत है तथापि, यह केवल कानूनी अधिकार है । विधि की दृष्टि से यह भी सुस्थापित है कि उक्त अधिकार को शासित करने वाले विधानों का कड़ाई से अर्थान्वयन करना होगा ।

13. अधिनियम की धारा 151क के अंतःस्थापन से पूर्व **डी. संजीवय्या**

बनाम **निर्वाचन अधिकरण, आन्ध्र प्रदेश और अन्य**[1] वाले मामले में दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने एक ऐसे संविवाद पर विचार किया जो आकस्मिक रिक्ति उत्पन्न होने से संबंधित था और उस संदर्भ में, उप-निर्वाचनों से संबंधित अध्याय की स्कीम के प्रतिनिर्देश किया और संविधान के अनुच्छेद 190(3) का विश्लेषण किया । न्यायालय ने, उक्त अनुच्छेद और कानून के विभिन्न उपबंधों के प्रतिनिर्देश करने के पश्चात् और ऐसी तथ्यात्मक स्थिति का प्राख्यान करने के पश्चात् जहां निर्वाचन को चुनौती देने वाली कोई निर्वाचन अर्जी लंबित थी, निम्न प्रकार अभिनिर्धारित किया :–

> "4. हम अपीलार्थी के तर्क को सही मानकर स्वीकार करने में असमर्थ हैं । हमारी राय में, अधिनियम की धारा 150 के उपबंधों का निर्वचन धारा 84 और धारा 98(ग) तथा उसी अधिनियम के भाग 3 के सुसंगत उपबंधों के संदर्भ में किया जाना चाहिए । यदि अपीलार्थी द्वारा दावे के साथ किया गया निर्वचन सही मानते हुए स्वीकार कर लिया जाता है तो जैसे ही कोई सदस्य अपने स्थान से त्यागपत्र देता है, उसके निर्वाचन को चुनौती देने वाली कोई निर्वाचन अर्जी लंबित रहते हुए भी वह रिक्ति तुरंत भरी जानी चाहिए । यदि वह अभ्यर्थी, जिसने निर्वाचन अर्जी फाइल की थी, अंततोगत्वा यह घोषणा प्राप्त कर लेता है कि उस सदस्य का निर्वाचन शून्य है और यह कि वह स्वयं सम्यक् रूप से निर्वाचित हो गया था तो एक ही निर्वाचन-क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करने वाले एक ही समय में दो अभ्यर्थी हो जाएंगे, एक वह जिसे साधारण निर्वाचन में सम्यक् रूप से निर्वाचित घोषित किया गया है और दूसरा वह जिसे उप-निर्वाचन में निर्वाचित घोषित किया गया है और एक असंभव स्थिति उत्पन्न हो जाएगी । यह कल्पना नहीं की जा सकती कि संसद् ने अधिनियम की धारा 150 अधिनियमित करते समय ऐसी स्थिति अनुध्यात की थी । संसद् का आशय यह नहीं हो सकता था कि जैसे ही कोई सदस्य विधान-मंडल में अपने स्थान से त्यागपत्र देता है तब निर्वाचन अर्जियों से संबंधित अधिनियम के भाग 6 के उपबंध निराकृत हो जाएंगे । अर्थान्वयन का यह सुस्थापित नियम है कि किसी कानून के उपबंधों का पठन इस प्रकार किया जाना चाहिए जिससे कि उनका एक-दूसरे से सामंजस्य हो और एक धारा के उपबंधों का प्रयोग किसी अन्य धारा के उपबंधों को विफल करने के लिए तब तक नहीं किया जा सकता जब तक

---

[1] ए. आई. आर. 1967 एस. सी. 1211.

कि उनके बीच समाधान कराना असंभव न हो..... ।"

न्यायालय ने आगे यह निर्णय दिया कि जब किसी निर्वाचन अर्जी को निर्वाचन आयोग द्वारा किसी अधिकरण को निर्देशित कर दिया गया हो और मामला अधिकरण के हाथ में हो तब याचिका का निपटारा विधि के अनुसार किया जाना होगा । अधिकरण को कार्यवाही पूरी करके यह न्यायनिर्णयन करना होगा कि निर्वाचित अभ्यर्थी ने निर्वाचन में कोई भ्रष्ट आचरण किया था अथवा नहीं और द्वितीयतः, उसे यह विनिश्चित करना होगा कि उस मामले में के द्वितीय प्रत्यर्थी को सम्यक् रूप से निर्वाचित किया गया घोषित किया जाना चाहिए अथवा नहीं । कोई निर्वाचित अभ्यर्थी विधान-मंडल में अपने स्थान से त्यागपत्र देकर अपने विरुद्ध फाइल की गई किसी निर्वाचन अर्जी से छुटकारा नहीं पा सकता है, चाहे उसके द्वारा त्यागपत्र देने के लिए कोई भी कारण क्यों न हो ।

14. इस संबंध में, **भारत का निर्वाचन आयोग** बनाम **तेलंगाना राष्ट्र समिति और एक अन्य**[1] वाले मामले में दिए गए निर्णय के प्रतिनिर्देश करना अत्यंत उपयोगी है । उक्त मामले में, प्रत्यर्थी ने आन्ध्र प्रदेश राज्य के दो विधानसभा निर्वाचन-क्षेत्रों की बाबत उप-निर्वाचन न कराने संबंधी भारत के निर्वाचन आयोग के विनिश्चय को चुनौती दी थी जिसे उच्च न्यायालय द्वारा अपास्त कर दिया गया था । उच्च न्यायालय ने अन्य बातों के साथ-साथ यह अभिनिर्धारित करते हुए अधिनियम की धारा 151क का अवलंब लेने संबंधी कार्रवाई को अभिखंडित कर दिया था कि उक्त उपबंध आज्ञापक है विशेषकर तब जब कि विधान सभा के अध्यक्ष द्वारा, जैसा कि संविधान के अनुच्छेद 190(3)(ख) के अधीन अनुध्यात है, रिक्तियों को पहले ही अधिसूचित कर दिया था । यह उल्लेखनीय है कि उच्च न्यायालय ने इस बात को अनदेखा कर दिया था कि अभ्यर्थियों के विरुद्ध निर्वाचन अर्जियां लंबित हैं और उन्होंने इस आधार पर त्यागपत्र दे दिया था कि निर्वाचन अर्जियों के अनिश्चित परिणाम अधिनियम की धारा 151क के प्रभाव को कम न कर सके । दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने अधिनियम और अनुच्छेद 190(3)(ख) के उपबंधों की संवीक्षा करते हुए, निम्नलिखित कथन किया :–

> "45. यह अधिनियम संविधान के अनुच्छेद 324 के अधीन नियुक्त भारत के निर्वाचन आयोग द्वारा निर्वाचनों के संचालन के लिए एक पूर्ण संहिता है, जिसमें संविधान के अधीन संसद्, प्रत्येक राज्य

[1] (2011) 1 एस. सी. सी. 370.

के विधान-मंडल के लिए कराए जाने वाले निर्वाचन और राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के पदों के लिए निर्वाचनों के अधीक्षण, निदेशक, नियंत्रण और संचालन का उपबंध है । अतः, संविधान के अनुच्छेद 190(3)(ख) के उपबंधों का पठन 1951 के अधिनियम के उपबंधों के साथ करना होगा । उक्त अधिनियम की धारा 84 को यह अभिनिर्धारित करते हुए निरर्थक नहीं ठहराया जा सकता है कि संविधान के उपर्युक्त उपबंध के कारण सभी रिक्तियां उप-निर्वाचन द्वारा भरे जाने के लिए तुरंत उपलब्ध हो जाती हैं । यही दलील 1951 के अधिनियम की धारा 151क और उसकी धारा 84 के पश्चात्वर्ती भाग पर पड़ने वाले उसके प्रभाव के संबंध में लागू होती है । जैसा इसमें इसके पूर्व उल्लेख किया गया है, धारा 84 के अधीन की जाने वाली कार्यवाही को विशेषकर उक्त अधिनियम की धारा 8-क के प्रयोजनों के लिए अपनी प्रक्रिया पूरी करनी होगी । अतः, उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा इस मुद्दे पर अभिव्यक्त मतों को कायम नहीं रखा जा सकता है ।"

न्यायालय ने आगे यह कहा कि धारा 151क के पुरःस्थापन से, जहां तक धारा 84 के उपबंधों और परिणामस्वरूप अधिनियम की धारा 98(ग) और धारा 101(ख) का संबंध है, स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ था हालांकि हो सकता है कि अधिनियम की धारा 150 के अर्थान्तर्गत एक आकस्मिक रिक्ति उद्भूत हुई हो । न्यायालय ने दो प्रवर्गों की रिक्तियों के बीच प्रभेद किया, अर्थात्, वे रिक्तियां, जिनमें निर्वाचन अर्जियां फाइल की गईं थीं और वे लंबित हैं और दूसरी वे रिक्तियों जहां ऐसा कोई मामला फाइल नहीं किया गया था और लंबित नहीं था । न्यायालय ने यह राय व्यक्त की कि प्रथम प्रवर्ग के मामलों में, रिक्तियों के बारे में यह नहीं माना जा सकता था कि मात्र इस कारण कि राज्य के किसी विधान-मंडल के सदन के किसी सदस्य ने त्यागपत्र दे दिया था और उसे अध्यक्ष द्वारा स्वीकार कर लिया गया था, वे रिक्तियां अधिनियम की धारा 151क के अधीन विहित समय के भीतर भरे जाने के प्रयोजनों के लिए उपलब्ध हो गईं हैं । उक्त निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए अधिनियम की धारा 84 पर विशेष बल दिया गया था । दूसरे प्रवर्ग के मामलों में, न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि रिक्तियों के बारे में यह अर्थान्वयन किया जाएगा कि वे ऐसी स्पष्ट रिक्तियां हैं जिनके संबंध में अधिनियम की धारा 151क के अधीन कार्रवाई करने की आवश्यकता है ।

15. कर्नाटक उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने **श्री थॉमस मेट्स गुडिनहो** बनाम **भारत का निर्वाचन आयोग, नई दिल्ली और अन्य**[1] वाले मामले में अधिनियम की धारा 151क का निर्वचन करते हुए निम्नलिखित रूप में मत व्यक्त किया :–

> "13. ..... निस्संदेह, धारा 151क में यह सुनिश्चित करने की ईप्सा की गई है कि कोई भी निर्वाचन-क्षेत्र छह मास से अधिक के लिए प्रतिनिधित्व के बिना न रहे । किन्तु यह बिना शर्त नहीं है । यह दो अपवादों के अध्यधीन है, अर्थात्, जहां किसी रिक्ति के संबंध में किसी सदस्य की शेष पदावधि एक वर्ष से कम है या जहां निर्वाचन आयोग, केन्द्रीय सरकार से परामर्श करके यह प्रमाणित करता है कि उक्त अवधि के भीतर उप-निर्वाचन कराना कठिन है । इसके अतिरिक्त, सर्वोपरि खंड लागू किए जाने के लिए धारा 147, धारा 149, धारा 150 और धारा 151 तक सीमित है । सर्वोपरि खंड में धारा 84 या धारा 98(ग) या धारा 101 के प्रतिनिर्देश नहीं किया गया है । अतः, इसका परिणाम यह है कि धारा 151क तब लागू नहीं होगी यदि कोई ऐसी निर्वाचन अर्जी लंबित है जिसमें निर्वाचित अभ्यर्थी के निर्वाचन को मात्र चुनौती देने की प्रार्थना नहीं की गई है बल्कि इस घोषणा की भी ईप्सा की गई है कि याची या किसी अन्य व्यक्ति को अधिनियम की धारा 101 के साथ पठित धारा 84 के अधीन निर्वाचित घोषित किया जाना चाहिए ।"

यह उल्लेखनीय है कि उक्त मत का **तेलंगाना राष्ट्र समिति** (उपर्युक्त) वाले मामले में अनुमोदन किया गया है ।

16. वर्तमान मामले में, कोई निर्वाचन अर्जी लंबित नहीं थी । निर्वाचित अभ्यर्थी ने तारीख 8 दिसम्बर, 2017 को अपना त्यागपत्र दे दिया था और उसे लोक सभा के अध्यक्ष द्वारा तारीख 14 दिसम्बर, 2017 को स्वीकार कर लिया गया था । धारा 151क की आज्ञा यह है कि रिक्ति उद्भूत होने की तारीख से छह मास की अवधि के भीतर निर्वाचन कराया जाए । जैसा कि तथ्यात्मक स्थिति से प्रदर्शित होता है, रिक्ति तब उद्भूत हुई जब लोक सभा के अध्यक्ष द्वारा तारीख 14 दिसम्बर, 2017 को

---

[1] ए. आई. आर. 2002 कर्नाटक 232.

त्यागपत्र स्वीकार कर लिया गया था । यह निर्विवाद है कि लोक सभा के लिए अगला साधारण निर्वाचन जून, 2019 में होना है । अतः, शेष पदावधि एक वर्ष से कम नहीं है । यह बात धारा 151क के परन्तुक के खंड (ख) द्वारा शासित होगी कि निर्वाचन कराया जाए अथवा नहीं और हमारा उससे कोई सरोकार नहीं है । इस आधार में बिल्कुल भी कोई सार नहीं है कि जून, 2019 में निर्वाचन कराए जाने से पूर्व आचार संहिता लागू हो जाएगी क्योंकि अधिनियम में ऐसा अनुध्यात नहीं है । निर्वाचन अर्जी के लंबित रहने के अधीन रहते हुए, मात्र अवधि ही शासित करने वाला कारक होना चाहिए क्योंकि वह सर्वोपरि खंड द्वारा नियंत्रित नहीं है । ऐसा निर्वचन लोकतंत्र के पवित्र सिद्धांत के अनुसार है और संसद् का आशय यह है कि किसी निर्वाचन-क्षेत्र को प्रतिनिधित्व के बिना न छोड़ा जाए । राजकोष पर पड़ने वाले भार के संबंध में अभिव्यक्त की गई चिन्ता को आधार नहीं माना जा सकता है । ऐसा इसलिए है क्योंकि प्रतिनिधित्व लोकतंत्र को निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा ही अपने आप को कायम रखना है । हम यह जोड़ने की जल्दबाजी कर सकते हैं कि मामला तब भिन्न होगा जब अभ्यर्थी के विरुद्ध कोई ऐसा निर्वाचन विवाद लंबित हो, जो कि अधिनियम की धारा 84 या धारा 98(ग) या धारा 101(ख) की परिधि के भीतर आता है । चूंकि ऐसी स्थिति नहीं है इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा अभिव्यक्त मत पूर्णतः अभेद्य है ।

17. परिणामस्वरूप, चूंकि विशेष इजाजत याचिका में कोई सार नहीं है इसलिए वह खारिज की जाती है । खर्चे के बारे में कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

विशेष इजाजत याचिका खारिज की गई ।

ग्रो.